(देश देशान्तरों में प्रचारित, सब से सस्ता, उच्च कोटि का आध्यात्मिक-पत्र

सन्देश नहीं मैं स्वर्ग लोक का लाई ।
इस भूतल को ही स्वर्ग बनाने आई ॥

वार्षिक मूल्य १।।) | सम्पादक—श्रीराम शर्मा । | एक अङ्क का ।=)

वर्ष ४] | मथुरा, अगस्त सन् १९४३ | अङ्क ८

सम्पादकीय विभाग

लोक लाज के बंधन में अपने को बाँध लीजिये !

यदि मन के ऊपर अंकुश रखने में आपको आपको कठिनाई मालूम पड़ती हो तो उसे लोकलाज के मजबूत रस्से से बांध दीजिए । बहुत बार ऐसा होता है, कि मनमें कोई बुरी प्रवृत्ति उठ रही है, किन्तु उसे चरितार्थ करना लोक लाज के विपरीत पड़ता है, तो अपनी प्रतिष्ठा को रक्षा के लिये उस काम को करने से रुकना पड़ता है । लोक लाज की रक्षा के लिए बड़ी-बड़ी कुर्बानियाँ की जाती हैं। कोई हमें गरीब न समझे इस भय से लोग भीतर ही भीतर अनेक कष्ट सहकर भी बाहरी लिफाफा ठीक बनाये रहते हैं । विवाह शादियों में सामर्थ्य से बाहर खर्च कर डालते हैं । इसका कारण यही एक है, कि हर मनुष्य चाहता है, कि मेरे बारे में लोगों के मन में जो अच्छी प्रतिष्ठा युक्त भावनाऐं हैं, वे वैसी ही बनी रहें, नष्ट न होने पावें । आप इस लोक लाज से अपने सदाचार को सम्बन्धित कर लीजिये जिससे कि जब गिरने का मौका आवे, तभी सँभल जाय, पतन की ओर जिस समय प्रवृत्ति हो उसी समय "कोई क्या कहेगा" "बड़ी बदनामी होगी" "आबरू धूलि में मिल जायगी" की प्रश्नवती अन्तःकरण में से उठ खड़ी हो और पतन मार्ग पर बढ़ते हुए पैर को जंजीर से जकड़ कर बाँध दे ।
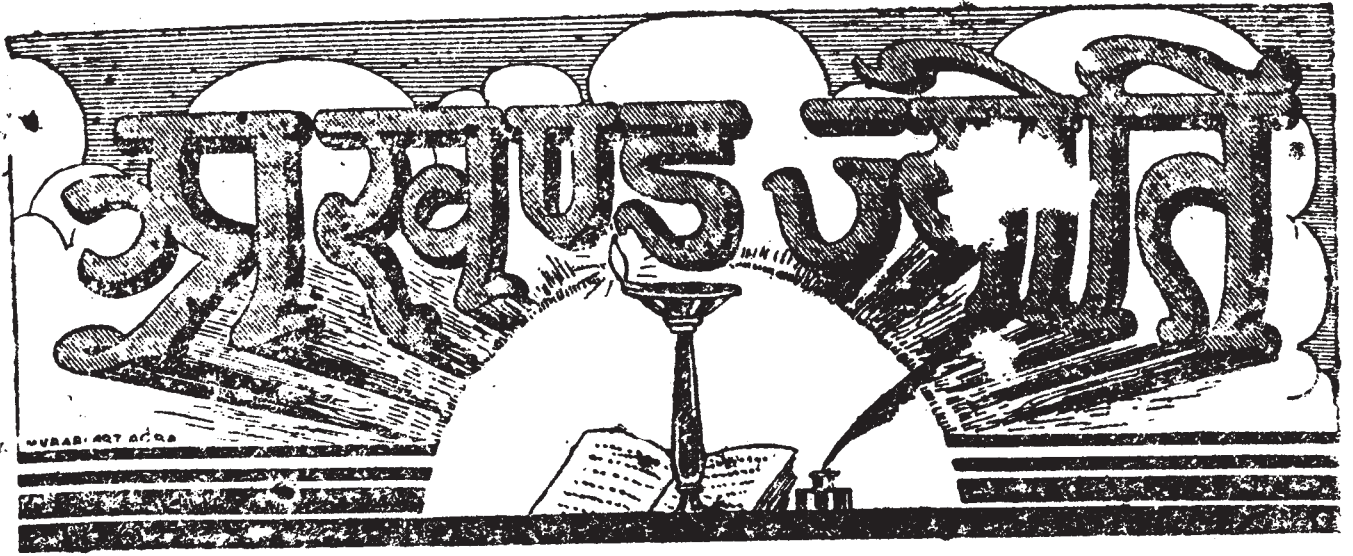
सुधा बीज बोने से पहिले, काल कूट पीना होगा।
पहिन मौत का मुकुट विश्व-हित, मानव को जीना होगा॥

वर्ष ४] १ अगस्त सन् १९४३ ई० [अङ्क ८

झंकार

(श्री मैथली शरण गुप्त)

इस शरीर की सकल शिरायें, हों तेरी तन्त्री के तार।
आघातों की क्या चिन्ता है, उठने दे ऊँची झंकार।
नाचे नियति, प्रकृति सुर साधे, सब सुर हों सजीव साकार।
देश देश में, काल काल में, उठे गमक गहरी गुंजार।
कर प्रहार, हाँ कर प्रहार तू, मार नहीं यह तो है प्यार।
प्यारे और कहूं, क्या तुझसे, प्रस्तुत हूं, मैं हूं तैयार।
मेरे तार तार से तेरी, तान तान का हो बिस्तार।
अपनी अंगुली के धक्के से, खोल अखिल श्रुतियों के द्वार।
ताल ताल पर भाल झुकाकर, मोहित हों सब बारंबार।
लय बंध जाय और क्रम क्रम से, सम में समा जाय संसार।

(झंकार से)

अखण्ड-ज्योति

उतर स्वर्ग से भूमण्डल पर 'सत्' की अमर ज्योति आती है।
वेणु बजाती सत्य-प्रेम को, सुमधुर न्याय गान गाती है॥

मथुरा. १ अगस्त सन् १९४३ ई०

श्रावण बदी अमावस्या

—:(❀):—

अनेक शास्त्रीय प्रमाणों से यह प्रगट है कि संवत् २००० एक प्रचण्ड क्रान्तिकारी वर्ष है। महाभारत के वन पर्व अध्याय १९० श्लोक २० तथा श्रीमद् भागवत १२-२-२४ के अनुसार- "जिस समय चन्द्रमा सूर्य और बृहस्पति एक ही समय पुष्य नक्षत्र में प्रवेश करते हैं, एक राशि के आते हैं उस समय युग परिवर्तन होता है।" भागवत् श्रीधरी टीका में ऐसा प्रश्न उठाया गया है कि ऐसा योग बीच बीच में भी आता है। परन्तु यह ठीक नहीं, क्यों कि महाभारत के बाद विगत ४८०० वर्षों में एक बार भी ऐसा योग नहीं आया। इतना ही नहीं बौद्ध, सिख, जरदस्त, यहूदी, बहावी, ईसाई, मुसलमान आदि अनेक धर्मों की प्रमाणिक पुस्तकों से तथा योगी अरविन्द घोष म० गाँधी महामना मालवीय रवीन्द्रनाथ टैगोर स्वामी विवेकानन्द स्वामी रामतीर्थ श्रीमती ऐनी बीसेन्ट ज्योतिषी कीरो रोम्यां रोला, पोपपायस फादर वालटर वेन ब्लोटस्की, रेवेण्डर मलार्ड जार्ज बावेरी, दालाई लामा आदि अनेक तत्व दर्शी महानु भावों ने एक स्वर से यह घोषित किया है कि युगान्तर की घड़ी आ पहुँची, परिवर्तन वेला आगई, भारी लोट पलट होने का ठीक समय उपस्थित होगया।

महाभारत और भागवत के अनुसार श्रावण बदी अमावस्या १ अगस्त १९४३ को यह योग उपस्थित होरहा है। निश्चय ही यह पुनीत घड़ी विश्व में असाधारण परिवर्तन करने वाली है। यह समझना गलती होगी कि इस दिन से सब कुछ बदल जायगा। युग परिवर्तन जैसे महान् कार्यों की पूर्ति में कुछ संध्याकाल तो होना ही चाहिए। इन दिनों करीब ८ बजे सूर्य अस्त होजाता है तो भी आध घंटे तक ऐसा समय बना रहता है जिसे रात्रि नहीं कहा जासकता। इसी प्रकार सूर्योदय के आरंभ में कुछ समय ऐसा होता है जिसे रात्रि कह कर नहीं पुकारा जासकता। जब १२ घंटे के दिन के आदि अन्त में इतना संध्या काल छूटता है तो हजारों वर्ष तक रहने वाले युग का भी कुछ संध्या काल रहना चाहिए। यह समय यदि दस बीस वर्ष हो तो भी अधिक नहीं मानना चाहिए।

बालक उत्पन्न होते समय तथा उसके कुछ पीछे तक माता को प्रसूति कष्ट होता रहता है। युग परिवर्तन के आरंभ काल में बहुत दिनों तक पूर्व परिस्थिति रहेगी। दीपक बुझने को होता है तो एक बार बड़े जोर से चमकता है। मरते वक्त चींटी के पंख उपजते हैं। अब कलियुग मर रहा, अनीति का अन्त होरहा है। ऐसी दशा में पाप अपने अन्तिम समय में बड़े जोर से चमके उग्र रूप प्रकट करे तो कुछ आश्चर्य की बात नहीं है। संभवतः अगले दिनों बहुत ही अधिक कष्ट मय घड़ियाँ संसार के सामने उपस्थित होंगी। युद्ध, रोग अकाल आदि आपत्तियाँ मनुष्य जाति के सामने औरभी भयंकर रूप के सामने आवेंगी। किन्तु साथ ही उस विषम वेदना के बीच स्वर्गीय भविष्य की भी आधार शिला स्थापित होगी। वर्तमान महायुद्ध के अभी कई वर्ष चलने की संभावना है, जब तक पूर्ण रूप से अन्याय मूलक विचार धारा का अन्त न होजायगा तब तक यह संघर्ष चलता रहेगा। बीच बीच में ठहर ठहर का अभिनय के यह भी होसकता है, कोई लाभ दायक उपाय कठिनाइयों को कुछ समय के लिए निवारण कर सकते हैं पर उनका समूल अन्त उस दिन होगा जब कलयुगी इच्छाऐं मर जायंगी और विश्व सत्य प्रेम तथा न्याय को हृदयंगम करेगा।

हमारा निश्चित विश्वास है कि अब मनुष्य जाति को अनीति छोड़कर नीति का आचरण करने के लिए बाध्य होना पड़ेगा। असत्य को सत्य के सामने अपनी पराजय स्वीकार करनी पड़ेगी। सच्चिदानंद प्रभु की यह प्रबल इच्छा

जान पड़ती है कि अधर्म के अभ्युत्थान का निवारण तथा धर्म की स्थापना अब होनी ही चाहिए। हमरी आँखें स्पष्ट रूप से देख रही हैं कि हर मनुष्य विपत्तियों की ठोकरें खा खाकर धर्म की ओर दिलचस्पी लेने लगा है, अधर्म के दुष्परिणामों को देख देखकर मन ही मन इस ओर से घृणा उत्पन्न होने लगी है। पुरानी पीढ़ी के वृद्ध पुरुषों की अपेक्षा नई पीढ़ी के व्यक्तियों में अधिक उदारता ईमानदारी त्याग भावना दिखने लगी है। यह काम दिन दिन बढ़ता ही जायगा जिस वृक्ष का अंकुर इस समय उत्पन्न होरहा है वह दिन प्रति दिन बढ़ता जायगा और एक दिन पूरा वृक्ष होकर अपनी शीतल छाया से सुगंधित पुष्पों में स्वादिष्ट फलों से आनंद की वर्षा करने लगेगा।

शास्त्रीय प्रमाणों तथा अनेक तत्वदर्शी आत्माओं की विश्वासनीय वाणी के अनुसार आज का वर्ष, आज का मास, आज का दिन, युग परिवर्तन का आरंभ काल है। इस पुनीत सात्विक पर्व की महानता का हमें अनुभव करना चाहिए और आज से अपने को अधिक पवित्र, उदार निर्मल, सत्य निष्ठ बनाने का उत्साह और निष्ठा के साथ प्रयत्न आरंभ करना चाहिए। हम लोगों के लिए यह बहुत ही श्रेयष्कर है कि प्रति दिन ईश्वर स्मरण के लिए कुछ निश्चित समय निकालें। हजार काम छोड़ कर किसी नियत समय पर ईश्वर प्रार्थना करें। अपने मनो भावों को अन्तःकरण में विराजमान प्रभु के सामने खोल कर रखें और उससे याचना करें कि-"हे करुणा निधान हमें अन्धकार से प्रकाश की ओर ले चलिए मृत्यु से अमृत की ओर ले चलिए, असत्य से सत्य की ओर ले चलिए।" नित्य प्रार्थना करना, नित्य आत्म निरीक्षण करना, नित्य सत्कर्म करने के लिए कोई न कोई अवसर ढूंढ निकालना यह तीनों अभ्यास निरंतर जारी रखने से हम लोग अपने को सतयुगी ढाँचे में धीरे धीरे ढालते जायेंगे। हर एक पाठक से हमारा अत्यन्त आग्रह पूर्वक अनुरोध है कि आज युग परिवर्तन की वेला में इन तीन पुण्य कार्यों का आरंभ करें और बिना विक्षेप के भविष्य में चालू रखें। जिनकी श्रद्धा हो इस अमावस्या को उपवास रखें और आगे भी प्रतिमास अमावस्याको निराहार या फलाहार सहित उपवास किया करें उस दिन विशेष रूप से आत्म शुद्धि और सत्कर्मों की ओर बढ़नेके कार्य क्रमपर गंभीरता पूर्वकसे विचार किया करें एवं सत्य के पुनीत मार्ग पर ले चलने की प्रभु से प्रार्थना किया करें। अखंडज्योति के पाठक सत्य की आराधना का इस प्रकार आरंभ करें सतयुग को शीघ्र लाने मेंइतना सहयोग तो अवश्य करें।

हम श्रावण की अमावस्याके एक सप्ताह तक निराहार उप वास रखेंगे ताकि भगवान सत्यनारायण की मर्जी के मुताबिक अपने को चलाने के लिए क्षमता प्राप्त कर सकें युग परिवर्तन के पुण्य पर्व में अपने कर्तव्य का ईमानदारी और दृढ़ता के साथ पालन करते रहने के लिए जिस आत्मबल की आवश्यकता है उसका बहुत कुछ अंश इस एक सप्ताह के निराहार उपवास द्वारा प्राप्त होगा ऐसा हमारा विश्वास है। ईश्वर चिन्तन, आत्मशुद्धि, तपश्चर्या यही तीन कार्य प्रधान रूप से इन दिनों रहेंगे ता० १ से ७ अगस्त तक पाठकों के पत्रों का उत्तर न दिया जासके तो उन्हें चिन्ता न करनी चाहिए इसबीच में पत्र भेजने वालों या मिलने के लिए आने वालों से कष्ट न करने क करबद्ध प्रार्थना करते हैं क्योंकि इससे हमारी साधना में विक्षेप पड़ेगा।

—श्रीराम शर्मा.

आदमी बनो !

[लेखक—श्री किंकर]

आपके जीवन में एक नहीं, अनेक बार ऐसे अवसर आये होंगे कि आपके साथ कोई दूसरा आदमी हो और उसके विषय में किसी ने पूछा हो कि "आपकी तारीफ ?" अर्थात् यह कौन हैं, तो आपने उत्तर दिया हो कि "आप अमुक फैक्टरी के मैनेजर हैं, अच्छे लेखक और वक्ता हैं अथवा डाक्टर हैं, ग्रेजुयेट हैं, गुजराती हैं, इत्यादि" किन्तु किसी की तारीफ में आपने न तो कभी यह कहा होगा न किसी दूसरे के मुंह से सुना होगा, कि आप मनुष्य हैं। क्या हुआ यदि आपने किसी से पूछा हो—"आप कौन हैं?" तो किसी ने मज़ाक में कह ही दिया हो—"आदमी हैं।" आप ऐसा जवाब सुनकर या तो खीझ गये होंगे या हँस दिया होगा। हमारा ख्याल है कि आपने कभी यकीन नहीं किया होगा कि वे कहने वाले सचमुच आदमी हैं। दुनिया में चाहे आज झूठ का बोल बाला हो पर यदि कहीं कुछ झूठ नहीं कही जाती तो केवल यही कि किसी को आदमी कहने के विषय में आज भी बड़े संयम और सत्य से काम लिया जाता है। एक साहब राजपूत हैं और साथ ही राजस्थानी भी हैं, हिन्दुस्तानी भी हैं, गोरे हैं, प्रोफेसर हैं, तो भी हो सकता है कि वे आदमी न हों। एक बच्चा ठोकर खाकर गिर पड़ता है, पीछे आने वाली लड़की उस गिरे हुए बच्चे को खून में लथपथ देखकर भी छोड़ कर जाती है। इसीलिये न कि वह उसका कोई नहीं है।

दिन दहाड़े एक भले आदमी को एक गुण्डा तंग कर रहा है, आप उसे क्यों नहीं बचाते। इसलिये कि आप उन दोनों से परिचित नहीं हैं या वे दोनों लड़ने वाले दूसरी कौम या मज़हब के हैं। आप अपने बच्चे के लिये खिलौने लाये हैं, दूसरा एक बच्चा भी सामने खड़ा है, वह भी आपके बच्चे की तरह खिलोने के लिये लालायित है पर खिलौना आप उसे नहीं देते, इसलिये कि वह बच्चा आपका नहीं है, चाहे वह यह भेद न जानता हो! एक बेचारा रोगी दर्द से पीड़ित आपको कुर्सी के पास बैठा मुंह की तरफ देख रहा है। आप उसे देखने से पहले सेठजी के कब्ज की शिकायत सुन रहे हैं। आप कैसे डाक्टर हैं! उस दिन जो एक थका हुआ आदमी बिना पूछे आपकी सड़क पर पड़ी खाली चारपाई पर बैठ गया था तो आप उससे क्यों लड़ पड़े थे। इसलिये तो कि वह अनजान पंजाबी था यह आपकी रोज़ की आदतें हैं! आप इन बातों में कभी अपनी कमजोरी या गलती अनुभव नहीं करते, इसलिये कि आप अभ्यस्त हो गये हैं उन हाकिमों की तरह जो क्लर्कों से १०-११ घण्टे काम लेकर भी उन पर इसलिये नाराज हो उठते हैं कि वे काम नहीं करते। तब सोलह आना हमारी समझ में आ गया कि आप सचमुच आदमी न होकर कुछ और ही हैं! आप अपने जन्म की स्थिति का चाहे न जानते हों, परन्तु किसी बच्चे को जन्म के समय अवश्य देखा होगा। आप बताइये, वह उस समय क्या था बेदर्दी डाक्टर या निर्दय अफसर या बेईमान वकील? क्या उस समय वह मुसलमान था? उसकी सुन्नत हुई थी? क्या वह हिन्दू था? क्या उस समय उसके चोटी या जनेऊ या तिलक था? यदि आप कहें कि वह मनुष्य था तो इसमें सन्देह नहीं किया जायगा। एक बात अवश्य है, शरीर से वह मनुष्य था हृदय और मस्तिष्क उसे मिलना था, पर वह इससे पहले ही आपके द्वारा हिन्दू, मुसलमान ईसाई बना दिया गया! क्या ही अच्छा होता कि—उसे जब मनुष्य का शरीर मिला था तो मनुष्य का हृदय और मस्तिष्क भी पा जाने देते और वह हिन्दुस्तानी, हिन्दू मुसलमान, राजपूत, ब्राह्मण, पंजाबी, बंगाली बनता, वह आदमी भी रहता और हिन्दू, मुसलमान, ईसाई भी। परन्तु आपकी भयानक भूल से वह आजतक केवल शरीर से मनुष्य अर्थात् आधा ही मनुष्य रहा। ठीक यही दशा आपकी भी है आप कोरे दूकानदार, वकील और दस्तकार हैं, आदमी नहीं। यदि शरीर की बनावट पर ध्यान न दिया जाय तो आप में और पशु में बहुत कम अन्तर रह गया है एक आप जैसा मनुष्य रूप में पशु सिगरेट पीने लगा है, आप भी उसकी देखा देखी सिगरेट पीना शुरू कर देते हैं, आपको इस बात में भेड़ की सिफत है। आपके हित के लिये कोई मनुष्य का संगठन करना चाहता है। आप में

से एक भागता है, उसको संभालना है तो दूसरा चला जाता है, तीसरा काबू में आया तो चौथा निकल गया! यह आप में उन मेंढकों के गुण हैं जो तुलने में नहीं आते। इसी तरह आप में चमगादड़, बगुले, काग और गीदड़ आदि पशुओं के स्वभाव और उनकी आदतें मिलती हैं। इसलिये आपके सम्बन्ध में कूपमण्डूक, तराजू के मेंढक, भेड़चाल आदि उपाधि ठीक ही प्रचलित है।

आज आपका समाज मानव समाज नहीं, हिन्दू समाज मुसलिम समाज है। आपका धर्म मानव धर्म नहीं, सनातनधर्म इस्लाम धर्म है। आपकी जाति मनुष्य नहीं, गूजर कोली, ब्राह्मण, वैश्य, क्षत्रिय, चमार हैं!

आपकी सभ्यता मानव सभ्यता नहीं, इङ्गलिश एटिकेट है। असल बात यह है कि आप मनुष्य ही नहीं हैं, और न जाने क्या क्या हैं। आप में एक खूबी है, मनुष्य हृदय और मस्तिष्क के बिना जीता नहीं, उसके लिये हृदय और मस्तिष्क आवश्यक है और हृदय और मस्तिष्क की खुराक भी, पर आप इन सब के बिना भी जीते हैं, पर केवल जीते ही हैं, वे सर्वोच्च आनन्द, जिनकी जीवित प्राणी आकांक्षा कर सकता है, आपको प्राप्त नहीं है। निर्दोष, शांतिमय, सर्वाङ्गपूर्ण जिन्दगी का मजा आपको चखने को भी नहीं मिलता। किसी प्रकार आपका जीवन तो स्थित है पर उसमें जिन्दगी का नाम नहीं। अब भी यदि आप जीवन के सर्वोच्च आनन्दों को जानना चाहते हैं तो मजबूत बनें, महान बनें, और बनें शरीर तथा हृदय और मस्तिष्कवाले पूर्ण मनुष्य। उस जीवनको जिसमेंजिन्दगी का नाम नहीं,और जो सड़ी गली चीजों से पूर्ण है,पता बतायें। जीवन की यह कोई साहित्यिक और शास्त्रीय व्याख्या नहीं सीधी सादी बात है:—

हमने माना हो फरिश्ते शेखजी।
आदमी होना बहुत दुश्वार है॥

अपनों के साथ दुर्व्यवहार

[श्री स्वामी विवेकानन्द जी महाराज]

'आप लोग मुझे क्षमा करें। आपको आज मैं "महिलाओं!" शब्द से संबोधन कर रहा हूँ। सचमुच हम लोग शताब्दियों से गुलामी करते करते स्त्री जैसे हो गये हैं। आप लोग इस देश या दूसरे किसी देश को जाइए। आप देखेंगे कि यदि एक स्थान में तीन स्त्रियाँ ५ मिनट के लिए भी इकट्ठी होंगी तो झगड़ा कर बैठेंगी। पाश्चात्य देशों में बड़ी बड़ी सभाऐं करके स्त्रियों की समता और अधिकारों की घोषणा से आकाश को गुंजादेती हैं पर इसके दो दिन बीतने न बीतते आपस में झगड़ा कर बैठती है तब कोई पुरुष आकर प्रभुत्व जमा लेता है। सभी जातियों में आप ऐसा ही देखेंगे। स्त्रियों को शासन में रखने के लिये अब भी पुरुष की आवश्यकता है। हम लोग भी इसी तरह स्त्रियों के समान हो गये हैं। अगर कोई स्त्री आकर उन स्त्रियों का नेतृत्व करने लगतीहै तो सब मिलकर उसकी कड़ी आलोचना करने लगती हैं! उसे बोलने नहीं देतीं जबरदस्ती बिठा देती है। लेकिन यदि कोई पुरुष आकर उनके प्रति कुछ कठोर व्यवहार करे बीच बीच में बुरा भला भी कहता जाय तो उन्हें अच्छा लगेगा क्योंकि वे तो इस प्रकार के व्यवहारों की अभ्यस्त होगई हैं। सारा संसार ही जादूगरों और वशीकरण मंत्र जानने वालों से भरा हुआ है। शक्ति शाली पुरुष सदा इस प्रकार दूसरों को वश में करते हैं। हम लोगों के सम्बन्ध में भी यही हुआ है। अगर आपके देश का कोई मनुष्य बढ़ना चाहता है तो आप सब लोग मिलकर उसे दबाते हैं लेकिन एक विदेशी आकर अगर लाठी भी मारे तो उसे अनायास ही सहने को प्रस्तुत होते हैं। आप लोग इसी के अभ्यस्त हो गये हैं! इसी लिये दासता के बन्धनों में पड़े हुए हैं। अपनों के साथ दुर्व्यवहार करना दासता की एक अचूक निशानी है!

—: वह है :—

(ले०—डा० रामनरायण श्री वास्तव्य "हृदयस्थ" ग्वालियर राज्य)

भारत में उस समय सम्राट हर्ष की प्रतिभा का प्रकाश फैल चुका था, उसके शौर्य,प्रताप,प्रजा पालन,न्याय प्रियता दयालुता आदि अनेक सद् गुणों ने देश में शांति, तुष्टि, पुष्टि की संस्थापना सी करदी थी, यद्यपि राजाश्रय बौद्ध धर्म कोही प्राप्त था तथापि राज्य में फैले हुये सनातन, हिन्दू धर्म का भी उचित सम्मान था, सुदूर देश से विभिन्न यात्रियों और प्रचारकों को आने की पूर्ण सुविधा थी।

भारत के पूर्व उत्तर प्रदेशवर्ती 'फाहियान' के निरीक्षक आशय का सन्देश प्राप्त होते ही शासक द्वारा उसकी विज्ञप्ति पर्याप्त रूप से भारत में प्रकाशित करदी गई:—

'मेरा विचार है कि भारत वर्ष ईश्वर वाद का चिर समर्थक है मैंने पृथ्वी के अधिकांश देशों में भ्रमण करके अपने मनकी (जिसे तुम सम्भवतः नास्तिक के नाम से पुकारोगे) पुष्टि में सफलता पाई है उस सबके समक्ष सिद्ध करने को तय्यार हूँ, मेरा निश्चय है कि वर्षा प्रारंभ होने के प्रथम ही भारत वर्ष में आकर शास्त्रार्थ सम्पादित किया जावे। १ ईश्वर का अस्तित्व, २ ईश्वर का कार्य, ३ उसे प्राप्त करने का सफल उपाय, उसके विषय होंगे, विजयी मत सर्व सम्मत एवं मान्य होगा।

धर्म प्राण देश का अधिकारी सज्जन समुदाय इस महान कार्य की सफलता में संलग्न था जिसमें कि चिरन्तन भावनाओं का साफल्य अन्तर निहित था।

धर्म क्षेत्र ही धर्म युद्ध का प्राङ्गण बना उस शास्त्रार्थ में भाग लेने वाले महोदयों की संख्या तो परिमित ही होगी। किन्तु दर्शक गणों की संख्या अप्रमेय थी। उभयपक्ष अपने सिद्धान्तों के मण्डन तथा विपक्ष खण्डन में अविराम तीन दिन लगे रहे, तथापि अनीश्वर वाद की विजय सी मानकर करतल ध्वनि में उसकी विजय घोषणा मुखरित हो पड़ी—

इस असंख्य जन समूह से सुदूर खड़े हुये एक द्वादश वर्षीय बालक ने पास खड़े हुये एक दर्शक महाशय से कहा कि यदि मुझे सभा मंच के समीप पहुँचा दिया जाय तो मैं विपक्ष के प्रश्नों का समुचित उत्तर देने समर्थ हो सकता हूँ। डूबते हुये को तिनके का सहारा 'अथवा, तृषा से मुरझाये हुये को एक बूंद जल में जीवन की आशा उस बालक को हाथों हाथ कुछ क्षणों में ही रंग भूमि में उपस्थित कर दिया गया, उसने खड़े होकर हाथ जोड़ते हुये सबको सम्यक शान्त होने की प्रार्थना की साथ ही उन अनीश्वर वादियों का उचित समाधान करने की आशातीत प्रतिज्ञा भी।

सभा में जन, जन, उत्सुक किन्तु शांत था बालक सर्वोच्च आसन पर विराजमान होकर समझा रहा था, ईश्वर है!

तुम्हारे अन्तर मन में प्रादुर्भूत अभिमान के प्रबल प्रवाह वेग को कोई भी जन नहीं देख सका था किन्तु उस सर्व द्रष्टा ने उसे देख लिया और उसी की यह प्रेरणा है उसका संकेत अपनी ओर था। 'ईश्वर का कार्य्य!

मुझ जैसे नगण्य तथा तुच्छ काय बालक को इस उच्च आसन पर बिठाने में दृष्टि गत कोई भी मानव समर्थ नहीं था यह उसकी महान सत्ता का ही कार्य है कि मैं आपके समक्ष इस प्रकार कुछ कहने में सक्षम हुआ।

"उसे प्राप्त करने के सफल उपाय!"

अनेकों हैं हमारे पूर्वज महर्षियों ने उसे प्राप्त करने की क्रियाओं का समुचित दिग्दर्शन शास्त्रों द्वारा कराया है किन्तु वे सर्व साध्य नहीं है। आप केवल इस जनार्दन की प्रस्फुटित जनता में ही अनन्य प्रेम करके उसके प्रत्यक्ष दर्शन पा सकोगे!

तीनों प्रश्नों का मनोतीत उत्तर संक्षेपतः किम्वा सार गर्भित रूप में पाकर विदेशियों के शीश श्रद्धा सेनत हो गये ("धर्म की जय" जनता में उल्लास था, और सरल बालक विदेशियों के हाथों पर!

अपने देश में जाकर उन्होंने भारतवर्ष के प्रति अपार श्रद्धा प्रकट की ऐसा उनकी लेखनी आज भी परिचय दे रही है!

धर्म बड़ा या अधर्म ?

त्रेता युग में गोमती के निकट वर्ती भूखंड पर राज्य करने वाले राजा भौवन के राज्य में एक गौतम नाम का व्यक्ति रहता था ॥ उसकी मणि कुण्डल नामक सहपाठीसे गहरी मित्रता थी। गौतम बाहर से तो बड़ा मृदु भाषी था पर भीतर ही भीतर उसके मन में कपट कटारी चलती रहती थी। मणि कुण्डल में ऐसी बात न थी वह बाहर और भीतर समान रूप से धर्म प्रेमी था।

जब दोनों मित्र बड़े हुए तो धन कमाने की कोई योजना सोचने लगे। अन्त में यह निर्णय हुआ कि परदेश जाकर कुछ व्यापार किया जाय। दोनों मित्र साथ साथ परदेश जाने के लिए तैयार होगये। व्यापार के लिए कुछ रुपये की आवश्यकता थी। मणि कुण्डल ने अपनेघर से धन लेलिया लेकिन गौतमने कुछ न लिया। उसने यह बदनीयती विचारी कि जैसे होगा वैसे मणिकुण्डल का धन हरण करलूंगा और वापिस लौट आऊंगा।

दोनों मित्र मंजिलें तय करते हुए सुदूर पूर्व के लिए चले जा रहे थे। एक दिन रास्ते में गौतम ने यह बहस छेड़ी कि धर्मात्मा होना व्यर्थ है क्योंकि धर्म करने वाले सदा दुख भोगते हैं इसके विपरीत अधर्मी सदा सुखी रहते है इसलिए मनुष्य को अधर्म ही अपनाना चाहिए। मणिकुण्डलको यह पक्ष सहन न हुआ वह धर्म की महत्ता पर जोर देने लगा। आखिर पर इस का विवाद बहुत बढ़ गया। अन्त में दोनों ने यह निश्चय किया कि जिसकी बात ठीक हो वह दूसरे का सारा धन ले ले।

वे यात्रा कर रहे थे और रास्ते में जो मिलता उसीसे पूछते आते थे कि धर्म करने वाले सुखी रहते हैं या अधर्म करने वाले ? जिससे पूछा उसने यही उत्तर दिया भाई धर्मात्माओं को तो निरे कष्ट सहने पड़ते हैं सुखी तो अधर्मी ही रहते हैं। सब जगह जब यही उत्तर मिले तो गौतम ने मणिकुण्डल का सारा धन शर्त के अनुसार लेलिया।

फिर भी मणि कुण्डल के विचार न बदले वह बार बार धर्म पर जोर देता था। कहता था धर्म से बढ़ कर अधर्म कदापि नहीं हो सकता गौतम ने कहा यदि तुम्हारा अब भी यही विश्वास है तो फिर शर्त लगाओ जो जीते वह दूसरे के हाथ काट ले। मणि कुण्डल राजी होगया। फिर उसी क्रम से रास्तागीरों से पूछ ताछ शुरू हुई तब भी वही उत्तर मिले सब लोग यही कहते-हमने तो धर्मियों को ही आनंद से रहते देखा है। आखिर गौतम ही जीता उसने शर्त के मुताबिक हाथ भी काट लिये। हाथों को कटा कर भी मणिकुण्डल अपने विश्वास पर दृढ़ रहा और धर्म के ही गुण गान करता रहा। इस बार हारने पर आँख निकाल लेने की बाजी बदी गई। पूछने का वही क्रम था उत्तर भी वही मिले, नतीजा भी वैसा ही हुआ। गौतम ने उसकी आँखें निकाल लीं और वहीं चीखता चिल्लाता छोड़ कर अपने घर वापिस लौट आया।

निर्जल वन में एक छोटे शिवालय के पास हाथ और नेत्रों को खोकर मणि कुण्डल असहाय पड़ा रोरहा था। वह सोच रहा था-हे भगवान ! क्या सच मुच ही धर्म से अधर्म बड़ा है ! अधर्म को अपनानेसे गौतम को मेरा सारा धन अनायास ही मिल गया और मैं धर्म पर आरूढ़ रहने के कारण यह विपत्ति भोग रहा हूं। उसकी फूटी हुई आँखों में से रक्त की धाराएं बह रहीं थीं।

उस दिन शुक्ल पक्ष की एकादशी थी। लंका के राजा विभीषण का पुत्र वैभीषिक उसी दिन उस शिवालय में पूजा करने आया करता था। आज संध्या समय वह जैसे ही शिवालय पर पहुँचा तो देखता क्या है कि एक नव युवक मंदिर के पास ही पड़ा हुआ पीड़ा से छटपटा रहा है, किसी ने उसके

हाथ काट लिये थे और नेत्र फोड़ दिये थे. वैभीषक ने अपनी आत्म शक्ति द्वारा सारी घटना जान ली. धर्मात्मा की यह दुर्दशा देखकर उसका हृदय दया से भर गया।

राम रावण के युद्ध के समय लक्ष्मण जी को शक्ति लगने पर हनुमान जी द्रोणागिर पर्वत उठा कर लाये थे जिस पर संजीवनी बूटी थी, हनुमान जी के हाथ से द्रोणागिरि का एक टुकड़ा इस शिवालय के निकट गिरा था और उस पर संजीवनी बूटी जम गई थी. वैभीषक उसे जानते थे, उन्होंने उस बूटी को लाकर उस घायल को पिला दिया, उस बूटी के प्रभाव से मणि कुण्डल को हाथ और नेत्र फिरसे प्राप्त होगये, वह हरे हरे कहता हुआ प्रसन्नता पूर्वक उठकर बैठ गया. वैभीषक के हाथ में संजीवनी बूंटी का जो टुकड़ा शेष था, वह मणि कुण्डल को दे दिया और कहा—बेटा ! यह बूटी अङ्ग भङ्ग के अङ्गों को फिर दा कर सकती है, इसे ले जाओ यह तुम्हें फिर लाभ देगी. अब तुम अपने घर वापिस चले जाओ. वह प्रसन्नता पूर्वक उस बूंटी को साथ लेकर घर को वापिस लौट पड़ा।

रास्ते में एक महापुर नामक राज्य पड़ता था. उस राजा के एक ही बेटी थी, जो अन्धी थी. राजा ने यह घोषणा कर रखी थी कि जो कोई इसकी आँखें अच्छी कर देगा उसी को मैं बेटी व्याह दूंगा और दहेज में सारा राज दे दूंगा. मणि कुण्डल ने यह सुना तो राजा के पास पहुँचा और आँखें अच्छी कर देने का आश्वासन दिया ! बूंटी को पिलातेही बेटी की आँखें अच्छी होगई. अब तो राज दरबार में आनन्द ही आनन्द छा गया. राजा ने बड़ी धूम-धाम से उसी के साथ बेटी का विवाह कर दिया. मणि कुण्डल राज का मालिक होकर आनन्द पूर्वक जीवन बिताने लगा।

उधर गौतम अपने मित्र का धन हरण करके घर पहुंचा और जूआ, शराब तथा वेश्याओं में धन को उड़ाने लगा. कुछ ही दिनों में वह सारा धन खर्च होगया और वह दीन, दरिद्र भिखारियों की तरह इधर उधर मारा मारा फिरने लगा।

मणिकुण्डल को अपने मित्र की याद आई, उसने रथ भेजकर गौतम को अपने यहाँ बुलाया और बड़े आदर से अतिथि सत्कार किया. जाते समय उसे बहुतसा धन पुरुष्कार दिया और कहा—मित्र ! वास्तव में धर्म करने वाले ही सुख पाते हैं. अधर्म से कोई मन का धन भले ही करले पर वह अन्तमें दुख देकर विदा हो जाता है. धर्म की जड़ गहरी है, धर्म के वृक्ष पर फल आने में कुछ देर लगती है, पर वह बहुत समय तक फल देता रहता है।

समालोचना—

'जीवन साहित्य' का गांधी उपवास अङ्क—सस्ता साहित्य मण्डल नई दिल्ली की ओर से विगत तीन वर्षों से जीवन साहित्य निकल रहा है. इसके लेख बहुत ही उच्चकोटि के, गम्भीर एवं विवेचना पूर्ण होते हैं. इस मास सहयोगी का 'गांधी उपवास' अङ्क प्रकाशित हुआ है, जिसका मू० १) है. महात्मा गांधी के अब तक के १३ उपवासों के सम्बन्ध में इसमें सर्वाङ्ग पूर्ण विस्तृत जानकारी है तथा उपवास विज्ञान के बारे में कई महत्व पूर्ण लेख हैं. जीवन साहित्य का वार्षिक मूल्य ३) भेजकर ग्राहक बनने वाले पाठक ऐसा ही उपयोगी साहित्य समय समय पर प्राप्त करते रह सकते हैं । विशेषाङ्क बहुत ही उपादेय है।

ऋण का परिशोध !

निकोलस और नेक इंग्लेन्ड के वेस्ट मिनिस्टर स्कूल में साथ-साथ ही पढ़ते थे। दोनों की प्रकृति में बड़ा भारी अन्तर था, एक भीरु था दूसरा निर्भीक फिर भी दोनों में गहरी मित्रता थी।

एक दिन अध्यापक महोदय किसी काम से बाहर गये हुए थे, लड़कों ने पढ़ना बन्द कर दिया और ऊधम मचाने लगे। शरारती लड़कों में निकोलस सब से आगे था। उसने सोचा कोई ऐसा काम करना चाहिए जिससे सब लड़कों को मजा आवे। इधर उधर खोज करने के बाद उसकी निगाह एक दर्पण पर रुकी, उसने कहा—यदि इसे फोड़ दूं तो कैसा अच्छा हो। आवेश में उसके हाथ आगे बढ़ गये, एक झोंके की तरह पत्थर का टुकड़ा उसने दर्पण पर देही तो मारा। दर्पण गिरा और गिर कर चूर चूर होगया।

दर्पण गिरते ही निकोलस की सारी शरारत काफूर होगई। उसका दिल जोर जोर से धड़कने लगा। शिक्षक द्वारा कठोर दंड मिलने की विभीषिका उसकी आँखों के आगे नाचने लगी। होसकता था उसे स्कूल से निकाल दिया जाय।

सारे स्कूल में सन्नाटा छाया हुआ था, किसी के मुंह से एक शब्द नहीं निकल रहा था। लड़कों की झुकी हुई गर्दनें मानों निकोलस के अपराध को स्वीकार कर रही हों। अध्यापक ने आकर यह विचित्र निस्तब्धता देखी तो उसे बड़ा आश्चर्य हुआ, रहस्य को जानने के लिये इधर उधर दृष्टि दौड़ाने लगे। उन्होंने देखा कि सामने के फर्श पर स्कूल का कीमती शीशा टूटा हुआ पड़ा है। अध्यापक की आँखों में आग बरसने लगी।

उन्होंने गरजते हुए कहा—यह शरारत जिसने की है, वह उठकर खड़ा होजाय। शिक्षक ने अपने आदेश को कई बार दुहराया, पर उस निस्तब्धता को तोड़ने की किसी को हिम्मत न हुई। भय और आशंका से सब की नसें जकड़ गईं थीं। अध्यापक ने बारी बारी सब से पूछना शुरू किया। लड़के मना करते जा रहे थे। निकोलस की बारी आई तो उसने भी इनकार सूचक शिर हिला दिया।

अब नेक का नम्बर आया, उसने सोचा निकोलस मना कर चुका है. पीछे भेद खुलेगा ही, इसे दंड भी सहना पड़ेगा और अध्यापक की दृष्टि में झूंठा भी ठहरेगा, इस लिये इसका अपराध मुझे अपने शिर ले लेना चाहिये, सच्चे मित्र का यही तो कर्तव्य है। अध्यापक के प्रश्न के उत्तर में वह उठ खड़ा हुआ, उसने गम्भीर स्वर में कहा—'हाँ! मैंने दर्पण तोड़ा है।' उत्तर का अन्तिम शब्द पूरा भी न हो पाया था, कि बेंतों की सड़ासड़ मार उसके ऊपर पड़ने लगी। कई जगह से चमड़ी छिल गई, बेंतों के नीले नीले निशान उठ आये! देखने वाले सिहर रहे थे, पर विजय, दृढ़ता और सन्तोष की भावना आँखों में भरे हुए नेक अपने स्थान पर अविचल खड़ा हुआ था।

स्कूल की छुट्टी हुई। नेक के अंग-अंग में पीड़ा हो रही थी, पर वह उल्लसित हृदय के साथ बाहर निकला। साथी उसे घेरे हुए खड़े थे, मानों उसे सच्ची मित्रता की विजय बधाई देरहे हों। निकोलस पर घड़ों पानी पड़ रहा था। उसकी आंखों में से आँसुओं की धारा बह रही थी, रुंधे कंठ से नेक को सम्बोधन करते हुए उसने कहा—'मित्र! तुम्हारे त्याग ने मेरे अंधेरे हृदय में एक नवीन ज्योति उत्पन्न करदी है, तुम्हारे इस ऋण से जन्म भर ऋणी रहूँगा।'

× × ×

समय बीतने में कुछ देर थोड़े ही लगती है एक के बाद दूसरा, दूसरे के बाद तीसरा, क्रम से तेंतीस वर्ष बीत गये. नेक और निकोलस एव

दूसरे से बहुत दूर पड़ गये। वे एक दूसरे को भूल भी चुके थे। निकोलस जज होगया था और वेक फौज कप्तान था। इग्लैण्ड के शासक से असंतुष्ट होकर प्रजा ने गदर कर दिया। अन्त में गदर सफल हुआ, राजा के सहायकों को पकड़ कर एकजेस्टर की जेल में ठूंस दिया गया। इन बन्दियों का मुकदमा वेक की अदालत में हो रहा था। विद्रोहियों की आशा थी कि अदालत इन समस्त बन्दियों को प्राण दंड की सजा देगी। अदालतमें बन्दी उपस्थित किये जानेलगे वेक सब को फाँसी की सजा दे रहा था।

सदा की भाँति उस दिन भी अदालत लगी हुई थी। सब से पहले एक फौजी कप्तान पेश किया गया। उसका नाम था—वेक। 'वेक, इस शब्द के साथ निकोलस के अन्तर में पड़ी हुई अतीत की एक स्मृति जागृत होगई। उसने बड़े ध्यान से बन्दी के चहरे को घूर घूर कर देखा। अरे! यह तो वही उसका बचपन का साथी वेक था। निकोलस की आँखों के आगे स्कूल, दर्पण, अध्यापक, बेत और अपना बचन, चित्रकी तरह नाचनेलगे पर वह कर्तव्य के लिए विवश था।

आज केवल इस एक बन्दी को मृत्यु की सजा सुना कर ही अदालत उठ गई। जज ने हुक्म दिया कि अब एक सप्ताह तक अदालत की छुट्टी रहेगी और जब तक अदालत न खुले इस कप्तान को फाँसी पर न चढ़ाया जाय। इस विचित्र आज्ञा का अर्थ कोई कुछ न समझ सका। लोग तरह तरह की अटकल लगा रहे थे।

निकोलस एक तेज घोड़ा लेकर लन्दन के लिए दौड़ा। राजधानी वहां से बहुत दूर थी। दो तीन दिन रात की तेज यात्रा करता हुआ न्यायाधीश लंदन पहुंचा। उसके सभी कपड़े बर्फ से भीगे हुए थे और बेत की तरह जाड़े से काँप रहा था। विद्रोही शासक क्रुम्य वेल ने न्यायाधीश निकोलस को इस रूप में खड़े देखकर आश्चर्य से कहा— निकोलस, तुम! यहाँ! इस प्रकार!

निकोलस ने कहा—मि० क्रुम्य वेल, मैंने आपका विद्रोह सफल कराने में सहायता दी है. आज मुझे आपकी सहायता की जरूरत है और इसी लिए आपके पास दौड़ा आया हूं। वेक मेरा मित्र है, उसका बहुत बड़ा ऋण मेरे ऊपर है, आज मैं उसके प्राणों की भिक्षा माँगने आपसे आया हूँ!

क्रुम्य वेल बड़ा कठोर और राज पक्ष के लोगों के लिए तनिक भी दया न रखने वाला शासक था पर जब उसने जब इन दोनों के बचपन की मित्रता सारा हाल सुना और वेक के हृदय की महानता का परिचय पाया तो उसकी आंखों में भी आंसू छलक आये। उसने वेक का मृत्यु दंड माफ करने का क्षमा पत्र लिख कर निकोलस को दे दिया और कहा—निकोलस, आखिर मैं भी तो मनुष्य ही हूं।

निकोलस संतोष की सांस लेता हुआ एकजेस्टर लौटा। वह सीधा जेल खाने पहुंचा और काल कोठरी में वेक को ढूंढकर क्षमा पत्र देते हुए उसे अपनी भुजाओं में कस लिया और रूंधे हुए कंठ से कहा—मुझे पहिचानते हो वेक?

वेक के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। न्यायाधीश! यहाँ, क्षमा पत्र लेकर। इतनी कृपा क्यों?

निकोलस ने कहा वेक, मैं तुम्हारा बचपन का साथी निकोलस हूं। आज तुम्हारा ऋण चुका रहा हूं।

दोनों मित्र एक दूसरे को पहचान कर भुजा पसार कर मिले। दोनों की आंखों से आंसू झर रहे थे। कंठ रुद्ध थे। इस मौन मिलन में सच्ची मित्रता का प्रवाह बह रहा था और मानवता की अन्तरात्मा अदृश्य लोक से उन पर पुष्प वर्षा कर रही थी।

❀ अपने को पहिचानो ❀

(ले०—स्वामी रामतीर्थ)

मूर्ख लोग जो अपने असली आत्मा को नहीं जानते, जो स्वार्थी और अहङ्कारी हैं, अपने महलों और राजभवनों को भी कारागारों, कब्रों और नरकों से बदतर बना लेते हैं, अपनी तुच्छ चिन्ताओं, नीच अधम इच्छाओं और काल्पनिक भय तथा शङ्काओं से वे अपनी जञ्जीरें आप गढ़ लेते हैं।

वेदांत तुम्हें बताता है कि तुम्हारा सुख तुम्हारा अपना ही कार्य है। सांसारिक कामनायें उसमें हस्तक्षेप करने वाली कौन हैं? सत्य को अनुभव करो और मुक्त हो जाओ। बहुत से लोग समझते हैं कि ईश्वर को प्राप्त करना कठिन है, परन्तु वेदान्त कहता है कि तुम तो स्वयं ही ईश्वर हो, ईश्वर के सिवाय और कुछ भी नहीं है। तुम्हें ईश्वर बनना नहीं, उसको केवल जानना बाकी है।

एक मनुष्य है जिसके घर में बहुत बड़ा खजाना है और वह उसे भूल गया है। एक दूसरा मनुष्य है जिसके घर में कोई खजाना नहीं है। वे दोनों खजाने के लिये खोदना शुरू करते हैं। जिस मनुष्य के खजाना है, किन्तु उसे भूल गया है, वह खोदने से पा ही जायगा। निधि तुम्हारे पास मौजूद है। अतः कृपण या कंजूस न रहो, उसे काम में लाओ। तुम्हारी आत्मा स्वभाव से अपवित्र या पापी नहीं है। वह एक व्यक्ति के पाप से पतित नहीं हो गई है और न उद्धार के लिये दूसरे व्यक्ति के पुण्य पर निर्भर करती है।

———

सात्विक सहायतायें।

इस मास कागज फंड में निम्न सहायतायें प्राप्त हुईं। अखण्ड ज्योति इन महानुभावों के प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करती है।

१) श्री० के० नन्द व्यास गरोठा
२) श्री० सुशीलचन्द्र गुप्ता हरदोई
१) श्री० ठाकुर प्रसाद सिंह नौतनवा
।॥) श्री० वी० डी० वर्मा मंझना
१) श्री० नोनुप्रसाद सिंह धुरियारी

लोक सेवा का प्रधान साधन।

(ले०—श्री रवीन्द्रनाथ, टैगोर)

उन घोर दुर्भिक्ष के दिनों में भूख से पीड़ित असंख्य लोग मरने लगे तो दया द्रवित होकर भगवान बुद्ध ने अपने शिष्यों से पूछा—क्या तुम में से कोई इन क्षुधा पीड़ित लोगों को भोजन कराने का जिम्मा ले सकता है?

लक्षाधीश रत्नाकर ने गरदन नीचे झुकाली और निराश वाणी में कहा—भगवन्! मेरे पास जितना धन है, उससे कई गुना अधिक इन भूखों को भोजन कराने के लिये चाहिये।

सेनापति जयसेन बोले—भन्ते! आपकी आज्ञा पर मैं प्राणों का उत्सर्ग तो कर सकता हूँ, पर इन भूखों को भोजन कराने योग्य सामिग्री कहां से दे सकता हूं!

जमींदार धर्मपाल ने एक ठण्डी सांस खींची और कहा—इस बार वर्षा कम होने के कारण मेरे सारे खेत सूख गये। राज्य-कर अदा करने के लाले पड़ रहे हैं, इन भूखों की कैसे सहायता करूं?

सभा के सब लोग सन्न बैठे हुए थे, किसी को कोई उपाय सूझ न पड़ रहा था। अन्त में एक भिक्षुक बालिका सुप्रिया उठी, उसने सिर झुकाकर नम्रता पूर्वक कहा—"मैं इन भूखों को भोजन कराऊंगी।"

उपस्थित लोग आश्चर्य चकित होकर उसकी ओर देखने लगे। एक साथ सैकड़ों कंठों ने पूछा—"यह साधन रहित बालिका किस प्रकार अपनी प्रतिज्ञा पूरी करेगी?"

सुप्रिया ने कहा—भद्र पुरुषो! सद्भावना मेरी शक्ति और पवित्रता मेरी सम्पत्ति है। मैं अपना टूटा फूटा भिक्षा पात्र लेकर आप सब लोगों के दरवाजे पर भूखों के लिए भिक्षा मागूंगी और अपना प्रण पूरा करूंगी।

परोपकारी सार्वजनिक कार्यों के लिए भिक्षा को प्रधान साधन बनाया जा सकता है।

———

बुराई का परिणाम।

(श्री०रामकृष्ण जी बुन्देला, लखनऊ)

—❀—

कहते हैं कि किसी नगर में एक बड़ा धनवान सेठ रहता था। कर्म फल से उसकी आँखें चली गईं। बेचारा अन्धा सेठ-धन धान्य रहते हुएभी दुखके दिन काटने लगा।

एक चालाक व्यक्ति सेठ के पास गया और बड़ी मीठी मीठी बातें करके यह प्रस्ताव रखा कि मुझे प्रबन्ध का भार सौंपा जाय तो बड़ी ईमानदारी से सब कारोबार सँभाल दूँगा और सब प्रकारके सुख साधन उपस्थित करता रहूँगा। सेठ इसके लिए तैयार होगया। चालाक व्यक्ति को मैनेजर बना दिया गया।

मैनेजर छिप छिप कर घात करने लगा। धीरे धीरे घर की सारी धन दौलत उसने खींचली। झूठे खर्च बता कर अपना घर भरने लगा। एक दिन उसने सोचा कि यदि यह सेठ मर जाय तो रही बची सम्पत्ति भी मेरे हाथ लग सकती है। उसने जहरीला साँप दूध में पका कर सेठ को पिला कर मार डालने का निश्चय किया।

दूसरे दिन कढ़ाई में दूध के साथ साँप पकाया जाने लगा। जाड़े के दिन थे आग तापने की इच्छा से सेठ भी चूल्हे के पास आ बैठे। ईश्वर की कृपा ऐसी हुई कि साँप के जहर की भाप उड़ कर आँख में लगी, तो उससे अन्धी आँखें अच्छी हो गई, सेठ को बिलकुल साफ दिखाई देने लगा।

कढ़ाई में उबलता हुआ जहरीला साँप देखकर मैनेजर की दुष्टता सेठ की समझ में आगई। घर में देखा तो सब माल खजाना चौपट पड़ा था, प्रबन्धक की धूर्तता स्पष्ट रूप से प्रगट होरही थी। सेठ ने मैनेजर को राज दरबार में पेश कर दिया जहाँ उसे भारी दंड मिला।

कथा में कितनी सचाई है यह मुझे मालूम नहीं, पर इतना मैं निश्चय पूर्वक कह सकता हूँ कि इसमें जो शिक्षा है वह पूर्णत: सत्य है। जो दूसरों के साथ बुराई करता है वह दुर्गति को प्राप्त होता है और जिसके साथ बुराई की जाती है उसका कुछ भी नहीं बिगड़ता वरन् उलटा अधिक फलता फूलता है।

———

मनुष्यता की उपासना

(श्री रमेश जी—बागा)

मनुष्य अपनी पुनीत वास्तविकता—मनुष्यता—को छोड़ कर पाशविकता की बर्बर उपासना करने लगा है। सचाई, ईमानदारी, भलाई और भ्रातृभाव के स्थान पर झूँठा प्रचार बेईमानी, धोखा धड़ी, शोषण, दमन और असभ्यता को प्रधानता दी जाने लगी है। जब से मानव जाति से असत्य के दुर्भाग्य पूर्ण पथ पर कदम बढ़ाना आरंभ किया है, उसी दिन से अशान्ति और कलह के बीजांकुर बढ़ने शुरू होगये हैं। कई शताब्दियों से संगठित और व्यापक अनीति को दौर दौरा रहा है उसके कडुए फल आज भयंकर परिणाम उपस्थित कर रहे हैं। धन जन का अपरमित संहार हो रहा है, हर एक मनुष्य अपने को आपत्ति और कठिनाई में फँसा हुआ अनुभव कर रहा है।

क्या यह दुखदाई परिस्थिति शीघ्र समाप्त होजागी ? क्या निकट भविष्य में शान्ति दायक घड़ियाँ आरही हैं ? मेरा विचार है कि अभी इस में बहुत देर है। कारण यह है कि अभी कोई ऐसे लक्षण दृष्टि गोचर नहीं हो रहे हैं जिनसे यह प्रतीत होता है कि मनुष्य जाति अपनी भूल महसूस कर के सुधार या पश्चाताप के लिए तैयार है। घात प्रतिघात, दाव पेच, शोषण, अन्याय का पूर्व प्रवाह यथा वत जारी है उस में कुछ भी अन्तर नहीं आया है। न तो व्यक्ति गत जीवन में सुधार की तीव्र उत्कंठा दिखाई पड़ती है और न सामूहिक जीवन में संगठित संस्थाओं एवं सरकारों में उसके कुछ चिन्ह प्रकट होरहे हैं।

विश्व शान्ति शस्त्रास्त्र की विजय पर निर्भर नहीं है और न संधियों समझौतों से काम चल सकता है तत्कालीन शान्ति का कोई उपाय ढूंढ लेने पर भी अन्तिम ठोस परिणामकी तब तक आशा नहीं की जा सकती जब तक कि मानवीय दृष्टिकोण से आमूल परिवर्तन न हो। सदाचार समानता और सद् व्यवहार के बिना संसार में स्थायी रूप से शान्ति नहीं हो सकती, यदि आये दिन सामने आने वाली दैविक, दैहिक, भौतिक विपत्तियों से बचना है तो एक ही उपाय है—'मनुष्यता की उपासना' बिना ईमानदारी को अपनाये मानवजाति का कल्याण नहीं हो सकता।

मन मंदिर को पवित्र करो

(लेखक—स्वर्गीय स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज)

ज्ञान को आगे रखकर कर्म (पुरुषार्थ) करना चाहिये-पुरुषार्थ से सारे कार्य सिद्ध होते हैं आलस में जीवन बिताना उसे नीरस फीका बनाना है आलस सब दुःखों का मूल है यह दरिद्रता लाता है, और ऐश्वर्य ले जाता है ईश्वर प्राप्ती के लिए जो पुरुषार्थ होता है उसे परम पुरुषार्थ कहते हैं लौकिक और पारलौकिक सुख दोनों इसी में हैं अतएव मनुष्य को पुरुषार्थी-उद्योगी यत्नशील होना चाहिये।

अंधकार को दूर करने का उपाय प्रकाश है-दीपक जलाओ। मल विक्षेप आवरण यह तीनों दोष अन्धकार हैं। अशुभ कर्मों के करने से मनुष्य के अन्तःकरण में मल बढ़ता है। कृत अशुभ कर्मों के लिए पछतावा और आगे को उनके विपरीत शुभ कर्म करने से मल दूर हो जाता है। मल के दूर होते ही उपासना अपना बल बढ़ाना प्रारंभ करती है। इच्छा की बहुतायत से विक्षेप बढ़ाता है। मन का राज होता है। इस कारण मन में चंचलता बढ़ती है-इस लिए मनुष्य को कम से कम १ घन्टा चित्तवृत्ति निरोध का अनुष्ठान अभ्यास द्वारा मन को एकाग्र करने का यत्न करना चाहिये। इसी का नाम उपासन है यही विक्षेप दूर करने का एक मात्र उपाय है। अब मल और विक्षेप के कम होने से प्रभु भक्ति की इच्छा उत्तरोत्तर बढ़ेगी। ऐसी अवस्था आने पर जिज्ञासु उत्तम अधिकारी होकर स्वयं अपने पुरुषार्थ से अज्ञान आवरण को दूर करने में करने लग जाता है. और कृतार्थ हो जाता है—ऐसे उत्तमाशय महाशयों का जीवन प्राणी मात्र के हितार्थ होता है। जब सब के सुख में अपना सुख प्रतीत होने लगा और सारी सत्ता एक ही मान ली तो फिर वहाँ अनिष्ट चिन्ता नहीं रहती और निर्वाण पद प्राप्त हो जाता है।

डायरी के कुछ पन्ने

[लेखक—डा० हीरालाल गुप्त, बेगूसराय]

जो भगवान के भरोसे अपनी जीवन-नौका को संसार सागर में छोड़ देता है अन्धपानी व तूफान की परवाह नहीं करता। वह नहीं सोचता कि मेरी नाव कहां लगेगी क्योंकि वह जानता है कि नाविक होशियार है और वह चतुरता से नाव को खे कर गन्तव्य स्थान पर पहुंचाही देगा। विश्वास एक बड़ी चीज है। × × ×

केवल ढोल देखने से यह नहीं कहा जा सकता कि इसमें से ठीक आवाज निकलेगी ही। संभव है उसका चमड़ा गीला या फटा हो। इसी प्रकार बड़ी दाढ़ी बाल टीका और चन्दन तथा माला देख कर ही अनुमान कर बैठना कि वह भला होगा ही अनुचित है। सोने और पीतल की परख तो कसौटी पर कसने से ही हो सकता है। × ×

चकोर तो स्वाति का बूंद ही पीकर प्यास बुझाता है। चाहे वह प्यासे मर जाये पर दूसरा जल हरगिज नहीं पीता। सत्पुरुषों की टेक भी ऐसी ही होती है। चाहे प्राण भले ही चला जाये पर वह सत्य से नहीं डिगाते। इसी में बड़प्पन और आनन्द का स्रोत छिपा हुआ है। दुनिया उसी को चाहता है जो अपने धर्म के लिये अपने को ईंटों में चुनवा देता है। × ×

जो प्रेम के दीवाने होते हैं उन्हें सदा और सर्वदा हरा ही हरा सूझता है। उन्हें आठों याम अपने प्यारे की ही याद बनी रहती है और वही उस रस में मैगल हाथी की तरह झूमते रहते हैं। लोग उन्हें पागल कहते हैं पर उसकी निगाह में तो ऐसे कहने वाले ही पागल हैं क्यों कि उनका रास्ता गलत है। वे सांसारिक दल दल में फंसे हैं और अपने मालिक को भूल बैठे हैं।

साधना का उद्देश्य ।

(ले०—श्री० योगी अरविन्द घोष)

ईश्वर के संसर्ग से अपनी आत्मा को पवित्र बनाकर और पाप से छुटकारा पाकर आध्यात्मिक विद्युत शक्ति से परिचालित होकर इस संसार में प्रकाश फैलाने के लिए, उस ज्योति की किरणों को संसार में बाँटने के लिये हमें आधार यन्त्र (डायनमो) का काम करना होगा। जिस प्रकार एक ही सुरंग पूर्ण शक्ति युक्त होकर शब्द के साथ पर्वत माला को विदीर्ण कर देती है, उसी प्रकार ईश्वरकी ज्योतिसे सम्पन्न होकर हमें संसार की सभी अशुद्धताओं और कुसंस्कारों को दूर करना होगा। इस तरह एक-एक मनुष्य साधना में सिद्ध होकर सैंकड़ों और हजारों प्राणियों के बीच, ज्ञान व शक्ति की ज्योति फैलाकर उनमें से अविद्या को दूर करेगा और उनका उद्धार करेगा। एक साधक की शक्ति के प्रकाश से सहस्रों जन धर्म में दीक्षित होंगे और सच्चिदानन्द के अगाध सागर में निमग्न होंगे।

मानव समाज के उद्धार का केवल एक ही मार्ग और एक ही उपाय है, जिसकी वह आज तक उपेक्षा करता आया है। उस मार्ग का नाम है—शक्ति साधना और आत्मोपलब्धि। इस लिये हमें पुनः उसी मार्ग का अनुसरण करना होगा, उसी पथ पर लौटना होगा, जहां से हमें ईसा की पवित्रता व पूर्णता, मुहम्मद का आत्म-विश्वास और आत्म समर्पण श्री चैतन्य देव का प्रेम व आनन्द, परमहंस राम कृष्ण का संसार के सभी धर्मों का समन्वय तथा एकीकरण व सूक्ष्म मानवताकी प्राप्ति होगी।

इन सब भावों को एकत्रित करके एक प्रबल स्रोत बहाना होगा। पतित पावनी, सकलमल हारिणी, पवित्र सलिला. भागीरथी गङ्गा की भांति नाशवान इस संसार तथा अधर्मरत इस मानव जाति के बीच में इसे प्रवाहित कर देना होगा। निश्चय मानो कि इस पृथ्वी पर एकबार पुनः स्वराज्य की स्थापना होगी। यही साधना उद्देश्य है।

भगवान का निवास ।

(ले०—जनार्दन पाण्डेय शास्त्री)

भगवान् रामचन्द्र ने वनवास के समय महर्षि वाल्मीक के आश्रम में जाकर पूछा—

> अस जिय जानि कहिय सोइ ठाऊं ।
> सिय सौमित्र सहित जहाँ जाऊं ॥
> तहं रचि रुचिर पर्ण तृण शाला ।
> वास करौं कछु काल कृपाला ॥

महर्षि हँसकर बोले—हे चराचर जग के निर्माता राम! मैं धन्य भाग्य हूँ. जो मनवाणी से अगम्य स्वरूप वाले आप मुझसे अपना निवास पूछते हैं, आप जगत् के निवास हैं और जगत् आपका। वह स्थान ही नहीं जहां आप न हो. फिर भी मैं कुछ स्थान बताता हूँ—

हे विधि हरिहर नर्तक! जिन पुरुषों के श्रवण समुद्र आपकी अगाध कथा सरिताओं के द्वारा निरन्तर भरने पर भी पूर्ण नहीं होते अथवा जो अन्य जलों की उपेक्षा कर आपके स्वरूप रूपी स्वाँति बूंद का ही आकांक्षा करते हैं, ऐसे नर श्रेष्ठों के हृदय ही आपके योग्य निवास हैं।

हे प्रणतपाल! जिनकी जिह्वा हंसिनी आपके यश मानस गुण मुक्ताओं का चयन करती है; जिनकी नासा आपके प्रसाद-सौरभ में ही रत रहती है ऐसे पुरुषों का हृदय ही आपके योग्य निवास है।

हे भव भयमञ्जन! जिनका मस्तक देवता, गुरू और ब्राह्मणों को देखते ही विनम्र हो जाता है. जिनके हाथ नित्य आपकी पूजा करते हैं, चरण आपके तीर्थस्थानों का पर्यटन करते हैं, जिन्हें नित्य आपका ही भरोसा है, जो सर्वदा आपके मन्त्र का जाप करते हैं, जिनका परिवार आपके निरन्तर अर्चन में रत है, उनका पवित्र हृदय ही आपके योग्य निवास है।

हे जन सुखदायक! जो विश्व कल्याण की कामना से आपके यज्ञ, व्रत, तप, उपासना, दान करते हैं और सब सेवाओं का एक मात्र फल 'आपके चरणों में प्रेम' मात्र चाहते हैं। काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या, मान,

पुराना सो सोना ।

(श्री० स्वामी सत्य भक्त जी महाराज, वर्धा)

भाई भूत भगत जी ! आजकल तो मँहगाई के मारे बड़ी परेशानी है। कल घी लेने गया, पर बड़ी मुश्किल से साढ़े तीन रुपये सेर मिला, सोभी अच्छा नहीं था।

भूत भगत–परेशानी तो पूरी है। हाँ, घी की परेशानी से कुछ दिनों के लिए मुझे जरूर छुट्टी मिल गई है।

ज्ञानदास—सो कैसे ?

भूत भगत–पुराने सामान में एक घी का पीपा निकल आया है। पिताजी के हाथ का घी है वह।

ज्ञानदास—पर अब किस काम का ? तुम्हारे पिताजी को गुजरे तो आठ दस वर्ष होगये होंगे, उसके भी पहले का होगा वह घी, अब क्या उसे खाओगे ?

भूत भगत—नहीं तो क्या ? पिताजी के हाथ का घी भला यों ही फेंका जायगा क्या ? पुराना हुआ तो क्या हुआ ? पुराना सो सोना।

ज्ञानदास—भाई साहब ! पुराना सो सोना भले ही रहे पर कृपा कर उसे खाने की चेष्टा न कीजिए। पुराना जब तक अच्छा रहे, तभी तक उसका उपयोग करना चाहिए।

भूत भगत—अरे बापदादों की चीज में क्या अच्छा क्या बुरा ? आप मानें या न मानें पर हमारी तुम्हारी अक्ल से बाप दादों की अक्ल अधिक थी। उनने अगर कोई चीज रक्खी है तो उससे बुराई कभी नहीं होसकती। मेरा नाम भूत भगत मुझे यह नाम बुरा नहीं लगता, बल्कि इससे मैं गौरव का अनुभव करता हूँ।

ज्ञानदास—सो आप कीजिए गौरव का अनुभव, पर कृपा कर वह घी न खाइयेगा।

भूतभगत—वास्तव में आप नास्तिक हैं, आपको समझाना बेकार है। पुरखों के विषय में आपको जरा भी सम्मान नहीं है।

ज्ञानदास—खैर साहिब, जैसी आपकी मर्जी।

(२)

ज्ञानदास—क्यों भाई ! आज तो आपको बहुत देर हुई। कहिए क्या काम था ?

रामनाथ—पड़ौस में एक गमी होगई थी, उसी की क्रिया के लिए श्मशान गया था।

ज्ञानदास—आपके पड़ोस में कौन मर गया ?

रामनाथ—भूतभगत को तो आप जानते ही होंगे, उन्हीं की मौत होगई। बेचारे बड़े सीधे आदमी थे।

ज्ञानदास—(चौंककर) ऐं ! क्या कहा ? क्या भूत भगत की मृत्यु होगई !! कैसे ? शायद वही पुराना घी उन्हें लेगया।

रामनाथ—हाँ, सुनने तो कुछ ऐसा ही है। आपको यह सब कैसे मालूम हुआ ?

ज्ञानदास—अजी, उस दिन मैंने उसे बहुत रोका था। पर आखिर उसने न माना ! आखिर भूत भगत ही तो था। बेचारा, "पुराना सो सोना" का शिकार। —संगम

कपट, दम्भ जिन्हें छू तक नहीं गया। जो सबके प्रिय और हितकारी हैं, दुःख सुख जिन्हें समान प्रतीत होता है, जो सर्वदा अपने को आपकी शरण मानते हैं, ऐसे नर श्रेष्ठों का हृदय ही आपके योग्य निवास है।

हे पूर्णब्रह्म स्वरूप ! जिनके लिये परस्त्री माता परधन विषतुल्य है, जो दूसरों की संपत्ति पर पर हर्ष और विपत्ति पर दुःख प्रकट करते हैं, जो दूसरों के अवगुणों पर दृष्टि न देकर सद्‌गुण ग्रहण करते हैं, नीति प्रदर्शित मार्ग ही जिनका मार्ग है, जिन्होंने आपके निमित्त धन संपत्ति जाति पांति मानप्रतिष्ठा सब कुछ त्याग कर दिया है, जिन्हें स्वर्ग नरक एक से प्रतीत होते हैं, मन बचन कर्म से जो आपके चरणों में स्नेह किये बैठे हैं ऐसे पुरुषों के हृदय ही आपके लिये उत्तम निवास हैं।

बाइबिल की वाणी

(भजन संहिता से)

हे पुत्र ! पराई स्त्री के होठों से मधु टपकता है और उसकी बातें तेल से भी अधिक चिकनी होती हैं। पर इसका परिणाम नागदौन सा कडुआ और तलवार सा पैना होता है। ५। १, ४

क्या यह हो सकता है, कि कोई अपनी छाती पर आग रखले और उससे कपड़े न जलें। क्या यह हो सकता है, कि कोई अँगारे पर चले और उसके पाँव न जलें। जो पराई स्त्री के पास आता है, उसकी दशा ऐसी ही है। जो कोई उसको छूऐगा सो दण्ड से न बचेगा। ६। २७, २९

हे पुत्र ! तेरा मन ऐसी (पराई) स्त्री के मार्ग की ओर न फिरे और न उसके मार्ग पर भटके, क्योंकि बहुत लोग उसके मारे पड़े हैं। उसके घात किये हुओं की एक बड़ी संख्या होगी। उसका घर अधो लोक का मार्ग है। वह मृत्यु के घर में पहुँचता है। ७। २४, २७

वेश्या गहरा गड्ढा उहरती है और पराई स्त्री का संकेत कुए के समान है। वह डाकू की नाईं घात लगाती और बहुत से मनुष्यों को विश्वास घाती कर देती है। २३। २६, २८

तू पराई स्त्रियां देखता रहेगा और उलट फेर की बातें बकता रहेगा, तो तू समुद्र के बीच लेटने हारे या जहाज के मस्तूल के सिर पर सोने हारे के समान रहेगा। २३। ३३, ३४

हे मेरे पुत्र ! अपना बल स्त्रियों को न देना न अपना जीवन उनके वश में कर देना। जो राजाओं का भी पौरुष खो देती हैं। ३१। २, ३

क़ुरान की शिक्षा

मनुष्यो ! पृथ्वी पर जो भक्त और पवित्र पदार्थ हैं, उनमें से ही भोजन करो और शैतान के अनुचर मत बनो, क्योंकि वह तो तुम्हारा प्रत्यक्ष शत्रु है। —सूरऐ बकर १। २। २१

दान पर उन भिक्षुकों का अधिकार है, जो अल्लाह के मार्ग में स्थिर हैं और पृथ्वी पर चलने फिरने की शक्ति नहीं रखते। निर्बुद्धि उनके न मांगने के कारण उन्हें धनाढ्य समझते हैं। तू उनको उनकी आकृति से पहिचान। यह लोग चिपट कर नहीं मांगते और जो कुछ भी तुम लोग धन में से दान में व्यय करोगे, अल्लाह को उसका बोध हो जायगा। —सूरऐ बकर १। २। ३७। ७

जो असत्य बातों का भेद लेते फिरते हैं, त्याज्य धन का ग्रहण करते हैं। पुनः यदि तेरे समीप आवें तो उन्हें आज्ञा दे, अथवा उनसे मुँह फेरले और यदि तू मुँह फेर लेगा तो वह तुझको कभी हानि पहुंचा सकेंगे।—सूरऐ माइदा २। ६। ६। ८

हे पैगम्बर ! इन लोगों से कहो, कि देश में भ्रमण करो और फिर देखो, कि झूठ बोलने वालों की क्या गति हुई।

—सूरतुल अनआम् २। ७। २। १

हे विश्वासियो ! पुस्तक वालोंके अनेकों विद्वान् और साधु, मनुष्यों का धन व्यर्थ खाते हैं और अल्लाह के मार्ग से भटके हुएहैं और जो लोग सोना चांदी गाड़ कर रखते हैं, किन्तु अल्लाह के मार्ग में खर्च नहीं करते उनको दारुण दुखके दण्ड का समाचार सुना, कि जिस दिन उनपर दोजख की अग्नि दिखावेंगे, जिससे उनके माथे और करवटों पृष्ठ भाग जलाये जायेंगे। अपने निमित्त गाढ़ते थे, लो अब उसका स्वाद चखो।

—सूरऐ तौवा २। १०। ५